[1990] 2 उम० नि० प० 764

बंसीधर और अन्य

बनाम

राजस्थान राज्य और अन्य

29 मार्च, 1989

मुख्य न्यायमूर्ति आर० एस० पाठक, न्यायमूर्ति ई० एस० वेंकटरामय्या, रंगनाथ मिश्र, एम० एच० कानिया और एम० एन० वेंकटचलय्या

राजस्थान भू धृति अधिनियम, 1955—अध्याय III -ख (सपठित राजस्थान इम्पोजीशन ऑफ सीलिंग ऑन एग्रीकल्चरल होल्डिंग्स ऐक्ट, 1973 की धारा 3)—पश्चात्वर्ती अधिनियम द्वारा पूर्ववर्ती अधिनियम के अध्याय III -ख और धारा 5 (6 क) का निरसन—अधिकतम सीमा नियत किए जाने की बाबत लंबित कार्यवाहियों पर निरसित अधिनियम के उपबंधों का लागू होना—पश्चात्वर्ती अधिनियम की स्कीम में निरसित अधिनियम के अध्याय III -ख और धारा 5 (6-क) के निरसित उपबंधों के व्यावृत्त किए जाने के प्रतिकूल और सुसंगत आशय प्रकट नहीं होता—पुरानी विधि के अधीन उपगत अधिकार और दायित्व लंबित मामलों में अप्रभावित रहेंगे।

राजस्थान इम्पोजीशन आफ सीलिंग ऑन एग्रीकल्चरल होल्डिंग्स ऐक्ट, 1973—धारा 3 (सपठित राजस्थान साधारण खंड अधिनियम, 1955 की धारा 6)—निरसित विधि की बाबत धारा 6 का लागू होना—उक्त धारा 6 का आश्रय तब तक नहीं लिया जा सकता जब तक नए विधान द्वारा इसके विपरीत आशय प्रकट नहीं कर दिया जाता—निरसन द्वारा निरसित परिनियम के अधीन अर्जित अथवा प्रोद्भूत अधिकार ही अप्रभावित रहते हैं, न कि अधिकार के अर्जित किए जाने का आशय या अपेक्षा या आवेदन करने की स्वतंत्रता।

प्रस्तुत अपीलें और विशेष इजाजत लेकर की गई याचिकाएं राजस्थान उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई हैं जिसके द्वारा उन्होंने राजस्थान टेनेंसी ऐक्ट के अध्याय 3 ख के अधीन आरंभ की गई कार्यवाहियों को, जो कृषि जोत की अधिकतम सीमा नियत करने से संबंधित थी, अपीलार्थियों की दलीलों को नजरअंदाज कर दिया। उच्च न्यायालय के समक्ष मुख्य संविवाद यह था कि क्या राजस्थान टेनेंसी ऐक्ट के अध्याय

3-ख के अधीन नियत तारीख से अधिकतम सीमा नियत करने के लिए की गई कार्यवाहियां पश्चात्वर्ती अर्थात् 1973 के अधिनियम द्वारा निरसित उपबंधों के बावजूद चालू रह सकती हैं। उच्च न्यायालय द्वारा इस चुनौती को नजरंदाज कर दिया गया जिसके विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील किए जाने पर अपील और याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—निरसित विधि और निरसनकारी विधि दोनों अलग-अलग पद्धतियों का प्रतिनिधित्व करती हैं और कृषि संबंधी सुधार की बाबत दोनों अलग-अलग दृष्टिकोण और भिन्न पद्धतियां हैं और भिन्न-भिन्न नीतियों के संबंध में आधारभूत रूप से और आवश्यक मानदंड के रूप में दोनों भिन्न-भिन्न हैं और एक साथ विद्यमान नहीं रह सकतीं। पुरानी विधि द्वारा मान्यताप्राप्त विधायी नीति और तकनीक जो पुरानी विधि में अंतर्विष्ट थी वह कृषि संबंधी जोत में चली आ रही भारी असमानता को समाप्त करने में नाकाम रही और कुछ लोगों के हाथों में संगृहीत कृषि-जोत को कम करने में अक्षम थीं और उसमें 'ऐसी असमानता को कम करने के लिए तथा कृषि-जोत की अधिकतम सीमा को पुनः नियत करने के लिए जिससे कि भूमिहीन व्यक्तियों को उपलभ्य कृषि भूमि का वितरण किया जा सके।' इस बात का उल्लेख किया गया था कि नई नीति को प्रभावी बनाने के लिए मुख्य कसौटी यह है कि पुरानी विधि के अधीन चली आ रही नीति को सजीव रखने के विपरीत आशय स्पष्ट हो। जब उसी विषय पर विधि के पुनः अधिनियमित किए जाने के साथ ही साथ परिनियम को निरसित किया जाता है तब नई अधिनियमिति के उपबंध यह सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए ही नहीं देखे जाएंगे कि साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 द्वारा अपेक्षित परिणाम निकलते हैं या नहीं। उक्त धारा 6 का निश्चित रूप से तब तक आश्रय नहीं लिया जाएगा जब तक नए विधान द्वारा इसके विपरीत आशय स्पष्ट नहीं कर दिया जाता। (पैरा 17)

किसी निरसनकारी परिनियम का व्यावृत्तकारी उपबंध इस प्रकार व्यावृत्त किए गए अधिकारों और बाध्यताओं के बारे में पूर्ण नहीं होता और न ही निरसन से बच रहे अधिकारों के बारे में पूर्ण होता है। यह आवश्यक है कि अधिकार प्रोद्भूत हो न कि मात्र अपरिपक्व। निरसन द्वारा निरसित परिनियम के अधीन अर्जित अथवा प्रोद्भूत अधिकार ही अप्रभावित है, न कि 'किसी अधिकार के अर्जित किए जाने का मात्र आशय या अपेक्षा' अथवा किसी अधिकार के लिए याचना करने की स्वतंत्रता। (पैरा 26 और 28)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[1987]	ए० आई० आर० 1987 एस० सी० 1221 : **आयकर आयुक्त, उत्तर प्रदेश बनाम शाह सादिक;**	26
[1980]	ए० आई० आर० 1980 एस० सी० 77 : **एम० एस० शिवानंद बनाम के० एस० आर० टी० कारपोरेशन;**	36
[1961]	ए० आई० आर० 1961 एस० सी० 838 : **मुख्य खान निरीक्षक बनाम के० सी० थापर;**	25

[1953] 1953 एस० सी० आर० 1188 :
रावशिव बहादुर सिंह और एक अन्य बनाम विंध्य प्रदेश राज्य. 25

निर्दिष्ट निर्णय

[1985] अनु: एस० सी० सी० 273 :
महाराष्ट्र राज्य बनाम **अन्नापूर्ण पिलई और अन्य;** 34

[1982] 3 एस० सी० आर० 218 :
भिकोबा शंकर धुमल (मृतक) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से और अन्य बनाम **मोहन लाल पनचंद टाथेड और अन्य;** 33

[1972] 1 एस० सी० आर० 48 :
रघुनाथ बनाम **महाराष्ट्र राज्य;** 32

[1971] 3 एस० सी० आर० 815 :
लालाजी राजा बनाम **फर्म हंसराज वाले;** 29

[1961] 2 ऑल इंग्लैंड रिपोर्ट्स 721 :
डाइरेक्टर ऑफ पब्लिक्स् वर्क्स बनाम **हो० पो० सांग;** 35

[1955] 1 एस० सी० आर० 893 :
पंजाब राज्य बनाम **मोहर सिंह;** 19

[1933] ए० आई० आर० 1933 इलाहाबाद :
रशीद अहमद बनाम **मुसम्मात अनीस फातिमा और अन्य.** 17

सिविल अपीलो अधिकारिता : 1977 की सिविल अपील सं० 2037-2042.

खंड न्यायपीठ की 1976 की विशेष अपील सं० 8, 20, 22, 26, 27 और 28 में राजस्थान उच्च न्यायालय तारीख 21 अक्तूबर, 1976 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री ए० के० सेन, वी० एम० तारकुंडे, शांतिभूषण, सुशील कुमार जैन, एन० डी० बी० राजू, राम कल्याण शर्मा, जगदीश नंदवारे, के० बी० रोहतगी, एस० के० ढींगरा, आर० एस० सोढी और विनीत कुमार

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री सी० एम० लोढा, बदरी दास शर्मा, एस० एस० खंडूजा और इंद्र मकवाना ।

न्यायालय का निर्णय न्या० एम० एन० वेंकटचलय्या ने दिया ।

न्या० वेंकटचलय्या—विशेष इजाज़त लेकर की गई ये अपीलें और विशेष इजाज़त अनुज्ञात करने के लिए पेश की गई ये याचिकाएं राजस्थान राज्य में कृषि सुधारों संबंधी

1989(3) eILR(PAT) SC 72

विधान की बाबत हैं जो राजस्थान उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा 21 अक्तूबर, 1976 को दिए गए उस निर्णय से उद्भूत हुई हैं और उनके विरुद्ध की गई हैं जिसके द्वारा विशेष अपीलों के एक समूह को खारिज कर दिया गया था और उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के 2 दिसंबर, 1975 वाले उस निर्णय को संपुष्ट कर दिया गया था जिसके द्वारा उन्होंने राजस्थान टेनेंसी ऐक्ट, 1955 के अध्याय III-ख के उपबंधों के अधीन आरंभ की गई और चालू कार्यवाहियों को जो कृषि जोत की अधिकतम सीमा नियत करने से संबंधित कतिपय कार्यवाहियों की विधिमान्यता के बारे में थीं अपीलार्थियों की दलीलों को नामंजूर कर दिया था। इस न्यायालय में सीधे फाइल की गई रिट याचिकाओं में उसी प्रकार के अनुतोष की वांछा की गई है जिस प्रकार के अनुतोष उच्च न्यायालय के समक्ष मांगे गए थे।

2. इन कार्यवाहियों में उच्च न्यायालय के समक्ष जो मुख्य संविवाद उत्पन्न हुआ था वह सूक्ष्मताओं और अलंकरणों से विहीन रूप में इस प्रकार था—क्या राजस्थान टेनेंसी ऐक्ट, 1955 (जिसे संक्षेप में 1955 का अधिनियम कहा गया है) के अध्याय III-ख के अधीन नियत तारीख अर्थात् 1-4-1966 से अधिकतम सीमा नियत करने करने के लिए की गई कार्यवाहियां राजस्थान इंपोजीशन ऑफ सीलिंग आन एग्रीकल्चरल होल्डिंग्स ऐक्ट, 1973 (जिसे संक्षेप में 1973 का अधिनियम कहा गया है) द्वारा पुराने अधिनियम अर्थात् 1955 के अधिनियम की धारा 5 (6) (क) और अध्याय III-ख को निरसित करते हुए 1 जनवरी, 1973 से प्रवृत्त किए जाने के पश्चात् भी आरंभ की जा सकती हैं और जारी रह सकती हैं या नहीं।

3. अध्याय III-ख जो राजस्थान राज्य में कृषि जोत पर अधिकतम सीमा अधिरोपित करने की बाबत है, 1955 के अधिनियम में राजस्थान भूधृति (संशोधन) अधिनियम, 1960 द्वारा जोड़ी गई थी। इसके बाद परिणामी आवश्यकता के अनुसार इसकी धारा 5 में खंड 6 (क) को पुरःस्थापित करते हुए संशोधन किया गया जिसमें 'अधिकतम सीमा' परिभाषित की गई है। मूल रूप से अधिसूचित तारीख 1-4-1965 नियत की गई थी' किंतु उच्च न्यायालय के समक्ष अध्याय III-ख के उपबंधों के विरुद्ध की गई चुनौती और उसमें विधि को स्थगित करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा अंतरिम आदेशों के कारण विधि के क्रियान्वयन में अनिश्चितता के फलस्वरूप सरकार को नई तारीख अर्थात् 1-4-1966 पुनः अधिसूचित करनी पड़ी और यह उच्च न्यायालय द्वारा अध्याय III-ख की विधिमान्यता को दी गई चुनौती को नामंजूर करने के पश्चात् किया गया।

4. '1973 के अधिनियम' के प्रवृत्त होने पर्यन्त अधिकतम क्षेत्र अवधारित करने की बाबत 33,471 मामले 1955 के पूर्वतर अधिनियम के अध्याय III-ख के उपबंधों के अनुसरण में विनिश्चित किए गए थे। वर्ष 1973 के अधिनियम के 1 जनवरी, 1973 को प्रवृत्त होने के पश्चात् 1955 के अधिनियम के अध्याय III-ख के अधीन अधिकतम क्षेत्र के अवधारण की बाबत 8,494 मामले संस्थित किए गए और उन्हें 1955 वाले निरसित अधिनियम के अध्याय III-ख के अधीन उन्हें इस विचार से जारी रखने की वांछा की गई कि 1973 के अधिनियम द्वारा 1955 के अधिनियम के अध्याय III-ख के निरसित किए जाने से पुरानी विधि के अधीन उद्भूत अधिकार और उपगत दायित्व प्रभावित नहीं होते।

1989(3) eILR(PAT) SC 72

अपीलार्थी की मुख्य दलील यह है कि 1973 के अधिनियम के प्रवृत्त होने के पश्चात्, जिसकी धारा 40 ने 1955 वाले अधिनियम के अध्याय III-ख को निरसित कर दिया है, पुरानी विधि के अधीन विहित अधिकतम सीमा से संबंधित किसी कार्यवाही के आरंभ करने, संचालित करने और निपटाने के प्रयोजन के लिए इसका आश्रय नहीं लिया जा सकता। इस दलील को अपीलाधीन निर्णय में इस न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है। इन अपीलों में पूर्ण न्यायपीठ द्वारा व्यक्त किए गए मत की यथार्थता पर विचार किया जाना है।

5. तथ्य संबंधी पूर्ववृत्त जिसके अनुसार उच्च न्यायालय के समक्ष संविवाद उत्पन्न हुआ था, अपीलों में से किसी एक के तथ्यों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। 1977 की सिविल अपील सं० 1003 (एन०) में अपीलार्थियों ने यह दावा किया कि उन्होंने अभिकथित विक्रय-करार तारीख 28-4-1957 के अनुसरण में भूमि में कतिपय खंडों का कब्जा लिया और उस पर खेती आरंभ की जिसके बारे में यह कहा जाता है कि वे तत्कालीन भू-धारी श्री हरि सिंह द्वारा उनके पक्ष में निष्पादित किए गए थे। विक्रय-विलेख 22-8-1966 को, अर्थात् अधिसूचित तारीख के पश्चात् पारित किए गए। श्री हरिसिंह के पास भूमि की अधिकतम सीमा संबंधी कार्यवाहियां 1955 वाले अधिनियम के निरसित अध्याय III-ख के अधीन आरंभ की गई। अपीलार्थी द्वारा की गई खरीदारी को उक्त अध्याय III-ख की धारा 30-घघ द्वारा प्रभावित माना गया जिसके द्वारा कतिपय निवासीय अर्हताएं विहित की गई थीं और जो ऐसे हस्तांतरण को मान्यता देने की पात्रता के बारे में अपीलार्थी पूरी नहीं करता था। अपीलार्थियों की यह दलील है कि यदि विक्रेता के मामले में नई विधि लागू की जाती है, तो उनके पक्ष में किया गया हस्तांतरण विधिमान्य माना जाना चाहिए और निरसित अध्याय III-ख का विधिक आश्रय लेने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। विभिन्न मामलों के तथ्यों और उनकी विशिष्टियों के अतिरिक्त आधारभूत प्रश्न इस तथ्य के अर्थान्वयन का है कि क्या पुरानी विधि के उपबंध व्यावृत्त हैं और लंबित मामलों को नियंत्रित करने के लिए सजीव हैं।

6. हमने अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले सर्वश्री एन० के० सेन, तारकुंडे और विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ताओं शांतिभूषण की सुनवाई की और राजस्थान राज्य और इसके प्राधिकारियों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री लोढा को सुना। अपीलार्थियों की मुख्य दलील, जिसे हम परिनियम के अर्थान्वयन के लिए ठीक समझते हैं, यह है कि बाद में बनाई गई विधि से स्पष्टतः, अभिव्यक्ततः और आवश्यक विवक्षा द्वारा ऐसा आशय दर्शित होता है जो निरसित विधि को अधिकार और बाध्यताओं के अधीन जारी रखने से सुसंगत नहीं है और यह कि तदनुसार 1 जनवरी, 1973 के पश्चात् जिस तारीख से 1973 वाला अधिनियम प्रवृत्त हुआ पुरानी विधि के अधीन कोई भी कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती थी अथवा जारी नहीं रह सकती थी।

7. इन अपीलों में जो मुद्दे विचारण के लिए सामने आते हैं वे इस प्रकार हैं कि क्या—

"(क) 1973 के अधिनियम में उल्लिखित 'अधिकतम सीमा' को अवधारित

करने के लिए भिन्न-भिन्न कसौटी और मानदंड अनुध्यात करने वाली स्कीम, विशेष रूप से धारा 40 के व्यावृत्ति संबंधी उपबंधों के सीमित दायरे को ध्यान में रखते हुए जिसमें अति महत्वपूर्ण रीति से राजस्थान साधारण खंड अधिनियम, 1955 की धारा 6 के अधीन लिए जाने वाले आश्रय का 1955 के अधिनियम के अध्याय III-ख और धारा 5 (6-क) को निरसित करने के लिए लोप कर दिया गया था, यह अर्थ लगाया और निष्कर्ष दिया जाना चाहिए कि इससे निरसित विधि को जीवित या व्यावृत्त रखने के विपरीत या से असंगत आशय निकलता है जिससे कि उसका आश्रय उन लंबित मामलों की बाबत लिया जा सके और उसे लागू किया जा सके जिनका कि निरसन से पूर्व पुरानी विधि के अधीन निर्णय नहीं दिया गया है; और

(ख) यह कि समस्त दशाओं में यदि राजस्थान साधारण खंड अधिनियम, 1955 की धारा 6 का आश्रय लिया गया और पुरानी विधि को इस प्रयोजन के लिए व्यावृत्त रखा गया, तो भी पुरानी विधि के उपबंधों का आश्रय नहीं लिया जा सकता क्योंकि पुरानी विधि के अधीन अवधारणीय अतिरिक्त क्षेत्र की बाबत राज्य के पक्ष में कोई अधिकार 'उद्भूत' नहीं हुआ, न ही पुरानी विधि के अधीन धारक द्वारा कोई दायित्व ही 'उपगत' हुआ जिससे कि पुरानी विधि के निरसन के पश्चात् उसके अधीन 'अधिकतम क्षेत्र' नियत किए जाने की कार्यवाही आरंभ की जा सके।"

दलीलों की बाबत (क)

8. इस आशय से कि यह दलील, जो स्पष्ट रीति में प्रस्तुत की गई है 'समुचित परिप्रेक्ष्य में देखी जा सके, कृषि जोत पर अधिकतम सीमा अधिरोपित करने से संबंधित पुरानी और पश्चात्वर्ती विधि के आवश्यक उपबंधों की रूपरेखा दे दी जाए।

9. वर्ष 1955 में राजस्थान भू-धृति अधिनियम, 1955 अधिनियमित किया गया। राजस्थान भू-धृति (संशोधन) अधिनियम द्वारा पहली बार अध्याय III-ख के अधीन ऐसे उपबंध किए गए जिनके द्वारा 1955 के अधिनियम में कृषि संबंधी जोत पर अधिकतम सीमा विहित की गई। वर्ष 1960 के इस संशोधनकारी अधिनियम को 12 मार्च, 1960 को राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हुई। अध्याय III-ख 15 दिसंबर, 1963 से एक समुचित अधिसूचना द्वारा प्रवृत्त किया गया। 1955 वाले अधिनियम में, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अधिसूचित तारीख 1-4-1966 थी।

10. 1955 के अधिनियम की धारा 5 (6-क) में 'अधिकतम क्षेत्र परिभाषित किया गया है—

*" 'अधिकतम क्षेत्र' किसी व्यक्ति द्वारा संपूर्ण राज्य में कहीं भी धारित भूमि के संबंध में, चाहे वह किसी भी हैसियत में धारण करे, अभिप्रेत है—वह

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

" 'Ceiling area' in relation to land held anywhere throughowt the State by a person, in any capacity whatsoever, shall mean the

अधिकतम क्षेत्र जो ऐसे व्यक्ति की बाबत धारा 30-ग के अधीन 'अधिकतम क्षेत्र' नियत किया जाए; "

11. अध्याय III-ख की धारा 30-ख में यह उपबंध किया गया था—

*"30-ख. परिभाषाएं—इस अध्याय के प्रयोजनों के लिए—

(क) 'कुटुंब से अभिप्रेत है—ऐसा कुटुंब जिसमें पति-पत्नी और उनके बच्चे तथा प्रपौत्र-प्रपौत्री जो उन पर निर्भर हों और उस पति की विधवा मां जो उस पर निर्भर हो, और

(ख) 'व्यक्ति', किसी व्यष्टि के मामले में, ऐसे व्यक्ति का कुटुंब भी सम्मिलित होगा।"

धारा 30 ग, जो अधिकतम क्षेत्र की बाबत है, में निम्नलिखित उपबंध किया गया है—

**"30. ग अधिकतम क्षेत्र का विस्तार—

पांच या पांच से कम सदस्यों के कुटुंब के लिए अधिकतम क्षेत्र 30 मानक एकड़ भूमि का होगा:

परंतु जहां किसी कुटुंब के सदस्यों की संख्या 5 से अधिक है वहां उनकी बाबत अधिकतम क्षेत्र प्रत्येक अतिरिक्त सदस्य के लिए 5 मानक एकड़ की दर से इस प्रकार बढ़ा दिया जाएगा, तथापि, वह 60 मानक एकड़ भूमि से अधिक न होगा।

स्पष्टीकरण—मानक एकड़ से अभिप्रेत होगा भूमि का वह क्षेत्र जो अपनी

---

maximum area of land that may be fixed as ceiling area under section 30 C in relation to such person;"

*"30 B. Definitions—For the purposes of this Chapter—

(a) 'family' shall mean a family consisting of a husband and wife, their children and grandchildren being dependent on them and the widowed mother of the husband so dependent, and

(b) 'person' in the case of an individual, shall include the family of such individual."

**"30-C. Extent of ceiling area—

The ceiling area for a family consisting of five or less than five members shall be thirty standard acres of land;

Provided that, where the members of a family exceed five, the ceiling area in relation thereto shall be increased for each additional member by five standard acres, so however that it does not exceed sixty standard acres of land.

Explanation—A 'standard acre' shall mean the area of land

उत्पादन क्षमता, स्थिति, मृदा के वर्गीकरण और अन्य विहित विशिष्टियों के निर्देश से विहित रीति में 10 मन गेहूं प्रति वर्ष की उपज दे सके; और ऐसी भूमि के मामले में जो गेहूं उत्पादन की क्षमता नहीं रखती अन्य संभावित उत्पाद, मानक एकड़ की संगणना के प्रयोजन के लिए विहित दर के अनुसार अवधारित की जाएगी जिससे कि धन में मूल्य के संबंध में वह 10 मन गेहूं के समतुल्य हो :

परंतु मानक एकड़ के अनुसार अधिकतम क्षेत्र अवधारित करते समय सुसिंचित (चाही) भूमि की उपज का धन संबंधी मूल्य असिंचित (बरानी) भूमि के समान क्षेत्र में हुए उत्पाद के धन संबंधी मूल्य के समतुल्य माना जाएगा।"

1955 के अधिनियम के अधीन नियम बनाने वाली शक्तियों का प्रयोग करते हुए, राज्य सरकार ने राजस्थान भू-धृति (अधिकतम भूमि का नियतन) सरकारी नियम, 1963 विरचित और प्रख्यापित किया जो 15 दिसंबर, 1963 से प्रवृत्त हुआ। नियम 9 में यह अपेक्षा की गई है कि उप-मंडल अधिकारी को अधिनियम की धारा 30-ग के अधीन प्रत्येक व्यक्ति को लागू होने वाला अधिकतम क्षेत्र अवधारित करने और धारा 30 (ङ) के उपबंधों को प्रवृत्त करने के लिए प्रत्येक भू-धारी और कब्जाधारी शिकमी, जिसके पास उसे लागू होने वाले अधिकतम क्षेत्र से अधिक भूमि है, अधिसूचित तारीख से छह मास के भीतर घोषणा फाइल करेंगे। विधि द्वारा अधिकतम क्षेत्र के रूप में तीस मानक एकड़ नियत किया गया है। तत्पश्चात् 1955 वाले अधिनियम के अध्याय III-ख में अनुक्रमिक संशोधन किए गए जिसमें अधिकतम क्षेत्र तीस मानक एकड़ ही कायम रखा गया, तथापि 1958 के पश्चात् कतिपय हस्तांतरणों को मान्यता दी गई जिन्हें अधिकतम सीमा नियत करते समय मूल्यतः मान्यता प्राप्त नहीं थी। पुनः वर्ष 1970 में (किए गए संशोधन द्वारा) धारा 30-झ को हटा दिया गया, 1955 वाला अधिनियम संसदीय विधि द्वारा अपने आप संविधान के अनुच्छेद 9 में सम्मिलित कर लिया गया। उक्त सम्मिलित किए जाने के विरुद्ध दी गई चुनौती को इस न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया।

12. तारीख 1 जनवरी, 1973 को राजस्थान राज्य के राज्यपाल ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 213 के अधीन राजस्थान कृषि जोत पर अधिकतम सीमा अधिरोपण

---

which, with reference to its productive capacity, situation, soil classification and other prescribed particulars, is found in the prescribed manner to be likely to yield ten maunds of wheat yearly; and in case of land not capable of producing wheat, the other likely produce thereof shall, for the purpose of calculating a standard acre, be detemined according to the prescribed scale so as to be equivalent in terms of money value to ten maunds of wheat :

Provided that, in determining a ceiling area in terms of standard acres, the money value of the produce of wel-irrigated (chabi) land shall be taken os being equivalent to the money value of the produce of an equal area of un-irrigated (barani) land."

अध्यादेश, 1973 प्रख्यापित किया। अध्यादेश ने 1955 वाले अधिनियम के अध्याय III-ख और धारा 5 (6-क) में अंतर्विष्ट कृषि जोत की अधिकतम सीमा से संबंधित तत्स्थानी उपबंधों को अध्यादेश की धारा 4 (1) के द्वितीय परंतुक और धारा 15 (2) में उपदर्शित सीमा के सिवाय, निरसित कर दिया। अध्यादेश द्वारा अधिकतम क्षेत्र के लिए मानकों की एक नई धारणा अस्तित्व में आई। पुरानी विधि के प्रवृत्त रहने के दौरान, भू-धारकों द्वारा किए गए कतिपय हस्तांतरणों को भी अध्यादेश द्वारा प्रयोग में लाई गई अधिकतम सीमा की संगणना के प्रयोजन के लिए विधिमान्य हस्तांतरण के रूप में मान्यता दी गई। इस अध्यादेश को 1973 वाले अधिनियम द्वारा बदल दिया गया जो भूतलक्षी प्रभाव अर्थात 1 जनवरी, 1973 से प्रवृत्त हुआ जो अध्यादेश के प्राख्यापन की तारीख थी। 1973 वाले अधिनियम की धारा 40 ने जैसा कि पूर्वगामी अध्यादेश द्वारा किया गया था' दोनों ही पुरानी विधियों को जो 1955 वाले अधिनियम के अध्याय III-ख में दी गई थी और पूर्वतर अध्यादेश में थी जिसके स्थान पर उसे प्रतिस्थापित किया गया था, निरसित कर दिया।

13. 1973 के अधिनियम की धारा 40 और धारा 3, धारा 4 (1), द्वितीय परंतुक में विशिष्ट सूचना दिए जाने की अपेक्षा की गई थी। धारा 3 निम्नलिखित रूप में उपबंध करती है—

***"3. अधिनियम अन्य विधियों संविदाओं आदि पर अध्यारोही है —**

इस अधिनियम के उपबंध तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के असंगत होते हुए भी किसी भी रूढ़ि परंपरा, संविदा अथवा न्यायालय अथवा अन्य प्राधिकरण की डिक्री या आदेश पर प्रभावी होंगे।"

14. अधिनियम की धारा 4 (1) से उपाबद्ध स्पष्टीकरण के द्वितीय परंतुक में निम्नलिखित उल्लेख किया गया है—

**"परंतु यह और कि यदि इस धारा के अनुसरण में किसी व्यक्ति या कुटुंब को लागू होने वाले अधिकतम क्षेत्र ऐसे व्यक्ति या कुटुंब को लागू होने वाली अधिकतम सीमा से धारा 40 और निरसित विधि के उपबंधों के अनुसरण में अधिक हो जाती

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"3. Act to override other laws, contracts, etc.—

The provisions of this Act shall have effect notwithstanding any thing inconsistent contained in any other law for the time being in force, on any custom, usage or contract or decree or order of a court or other authority."

**"Provided further that if the ceiling area applicable to any person or family in accordance with this section exceeds the ceiling area applicable to such person or family according to the provisions of law repealed by section 40, in that case the ceiling area applicable

है तो ऐसी दशा में ऐसे व्यक्ति या कुटुंब को लागू होने वाली अधिकतम सीमा वही होगी जो उक्त निरसित विधि के उपबंधों के अधीन थी।"

धारा 40 में इस प्रकार उपबंध किया गया है :

*"40. **निरसन और व्यावृत्ति** : (1) इस अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) के द्वितीय परंतुक और धारा 15 की उप धारा (2) में यथा उपबंधित के सिवाए, राजस्थान टेनेंसी ऐक्ट, 1955 (1955 का राजस्थान अधिनियम 3) की धारा 5 के खंड 6 (क) के उपबंध राजस्थान नहर परियोजना क्षेत्र को छोड़कर एतद्द्वारा निरसित किए जाते हैं जहां ऐसे उपबंध उस तारीख से निरसित हो जाएंगे जिस तारीख को उस क्षेत्र में यह अधिनियम प्रवृत्त होता है।

(2) राजस्थान कृषि जोत अधिकतम सीमा अधिरोपण अध्यादेश, 1973 (1973 का राजस्थान अध्यादेश 1) एतद्द्वारा निरसित किया जाता है।

(3) उपधारा (2) के अधीन उक्त अध्यादेश के निरसित किए जाने के बावजूद किए गए किसी कार्य या की गई कार्यवाही अथवा उक्त अध्यादेश के अधीन बनाया गया कोई नियम इस अधिनियम के अधीन किया गया कार्य, की गई कार्यवाही या बनाया गया नियम समझा जाएगा और राजस्थान साधारण खंड अधिनियम, 1955 की धारा 27 ऐसे निरसन और पुनरधिनियमिति को लागू होगी।"

15. धारा 41 में एक कानूनी घोषणा अंतर्विष्ट की गई है कि अधिनियम भारत के

---

to such person or family will be the same as was under the provisions of the said repealed law."

Section 40 provides :

*"40. **Repeal and savings**—(1) Except as provided in second proviso to sud-section (1) of section 4 and in sub-section (2) of section 15 of this Act, the provisions of clause (6-A) of section 5 and Chapter III-B of the Rajasthan Tenancy Act, 1955 (Rajasthan Act 3 of 1955) are hereby repeaed except in the Rajasthan Canal Project area wherein such provisions shall stand repealed on the date on which this Act comes into force in that area.

(2) The Rajasthan Imposition of Ceiling on Agricultural Holdings Ordinance, 1973 (Rajasthan OrdinanceI-of 1973) is hereby repealed.

(3) Notwithstanding the repeal of the said Ordinance under sub-section (2), any thing done or any action taken or any rules made under the said Ordinance shall bc deemed to have been done, taken or made under this Act and section 27 of the Rajasthan General Clauses Act, 1955 (Rajasthan Act 8 of 1955) shall apply to such repeal and re-enactment."

1989(3) eILR(PAT) SC 72

संविधान के अनुच्छेद 39 (ख) और (ग) में विनिर्दिष्ट सिद्धांतों को सुनिश्चित करने के लिए राज्य के नीति निदेशक तत्वों को प्रभावी करने के लिए है।

16. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि जब कोई परिनियम निरसित किया जाता है और जिसके परिणामस्वरूप उसी विषय पर नई विधि अधिनियमित की जाती है, चाहे उपांतरणों के साथ हो या उनके बिना, वहां साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 का आश्रय नहीं लिया जा सकता और इस प्रश्न पर कि किस सीमा तक निरसित विधि व्यावृत्त है, पश्चात्वर्ती परिनियम के अभिव्यक्त उपबंधों पर निर्भर करेगा या इसकी आवश्यक और अनिवार्य विवक्षा क्या होगी इस बात पर निर्भर करेगा। इस बात पर जोर दिया गया कि जहां निरसन के साथ-साथ उसी विषय पर नए सिरे से विधान बनाया जाता है, वहां नई विधि स्वयं यह अवधारित करेगी कि क्या और किस सीमा तक पुरानी विधि व्यावृत्त है और साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 या नई विधि में इस प्रभाव के समान स्पष्ट उपबंधों में अभिव्यक्त अपील के प्रभाव में पुरानी विधि के उपबंध, जो कुछ किया जा चुका है या किए गए प्रभाव का माना गया है, को छोडकर विलुप्त समझा जाएगा। इस तर्क में वही परिचित बात है जो मुख्य न्यायमूर्ति सुलेमान ने **रशीद अहमद** बनाम **मुसम्मात अनीस फातिमा और अन्य**[1] वाले मामले में कहा था। किंतु अब यह सुस्थापित माना जाना चाहिए कि साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 में अभिव्यक्त निर्देश का अभाव माना निर्णायक नहीं है जब तक साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 का आश्रय लेने के लिए ऐसे लोप के साथ वे परिस्थितियां भी मौजूद न हों कि नई विधि के उपबंधों से यह बात दर्शित होती है कि साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 के लागू होने से, अन्यथा भिन्न आशय प्रकट होता जिससे धारा 6 के आपतन और परिणाम निकलते।

17. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि विधानमंडल ने कृषि संबंधी सुधार के विषय में जो विधान बनाया उसमें स्वाभाविक रूप से कठिनाइयां उत्पन्न हुईं जिससे काम रुक गया और परस्पर विरोधी सामाजिक आर्थिक हित परस्पर मिलजुल कर जटिल हो गए जिसके लिए कई क्रमों में इसका प्रायोगिक विकास उचित होगा और पूर्वतर हुए पश्चात्वर्ती विधान के बीच नीति संबंधी स्पष्ट विकल्पों में व्यापक विभेद होने के कारण अनिवार्य रूप से यह निष्कर्ष देना पड़ेगा कि पश्चात्वर्ती विधान के बीच नीति संबंधी स्पष्ट विकल्पों में व्यापक विभेद होने के कारण अनिवार्य रूप से यह निष्कर्ष निकलता है कि पश्चात्वर्ती विधान निरसित विधि के अधीन अधिकारों और बाध्यताओं को जारी रखने के आशय से असंगत एवं विपरीत था। इस बात पर सहमति व्यक्त की गई कि निरसित विधि में समाहित कृषि संबंधी सुधार की नीति के क्रियान्वयन में जो अनुभव प्राप्त हुए हैं और नई नीति पर किए जाने वाले विचार-विमर्श से नई नीति के व्यापक अंगों के बारे में आधारभूत रूप से नई विचारधारा ने जन्म लिया है और नई विधि में उसे नियमित किया गया है जिसके कि निरसित विधि और निरसनकारी विधि दोनों अलग-अलग पद्धतियों का प्रतिनिधित्व करती हैं और कृषि संबंधी सुधार की बाबत दोनों अलग-अलग दृष्टिकोण और भिन्न पद्धतियां हैं और भिन्न-भिन्न नीतियों के संबंध में आधारभूत रूप से और आवश्यक मानदंड के रूप में दोनों भिन्न-भिन्न हैं और साथ-साथ विद्यमान्य नहीं रह सकतीं। इस बात पर जोर दिया गया कि

[1] ए० आई० आर० 1933 इलाहाबाद 3.

1973 के विधेयक से उपबद्ध उद्देश्यों और कारणों के कथन में इस बात को मान्यता दी गई थी कि पुरानी विधि द्वारा मान्यताप्राप्त विधायी नीति और तकनीक, जो पुरानी विधि में अंतर्विष्ट थी, वह कृषि संबंधी जोत में चली आ रही भारी असमानता को समाप्त करने में नाकाम रही और कुछ लोगों के हाथों में संगृहीत कृषि जोत को कम करने में अक्षम थीं और उसमें 'ऐसी असमानता को कम करने के लिए तथा कृषि जोत की अधिकतम सीमा को पुनः नियत करने के लिए जिससे कि भूमिहीन व्यक्तियों को उपलब्ध कृषि भूमि का वितरण किया जा सके। इस बात का उल्लेख किया गया था कि नई नीति को प्रभावी बनाने के लिए मुख्य कसौटी यह होनी चाहिए कि पुरानी विधि के अधीन चली आ रही नीति को सजीव रखने के विपरीत आशय स्पष्ट है। पश्चात्‌वर्ती विधि की निति में व्यापक परिवर्तन से इन विषयों को एक नया और आधारभूत रूप से भिन्न दृष्टिकोण मिला, जिसके अंतर्गत—

(i) अधिकतम क्षेत्र के बारे में आधारभूत रूप से पुनर्विचार किया जाना और उसे पुरानी विधि में विहित 30 मानक एकड़ से हटाकर 18 मानक एकड़ किया जाना :

(ii) 'कुटुंब और पृथक एकक' की धारणा को पुनः परिभाषित करना;

(iii) वह समय जिसके प्रति निर्देश से 'कुटुंब का गठन और उसके सदस्यों की संख्या सुनिश्चित किए जाने की अपेक्षा होगी;

(iv) भू-धारकों द्वारा किए गए हस्तांतरण जिनके अंतर्गत वे हस्तांतरण भी हैं जो पुरानी विधि के लागू रहने वाली अवधि के दौरान किए गए हों, को मान्यता देने की बाबत नई नीति पर विचार;

(v) अतिरिक्त भूमि के सरकार में निहित होने का समय;

(vi) भूमिहीन व्यक्तियों के बीच अतिरिक्त भूमि के वितरण की बाबत सिद्धांतों और प्राथमिकताओं के बारे में पुनर्निर्धारण, और

(vii) नई विधि के अधीन राज्य में निहित होने वाली अतिरिक्त भूमि के भू-धारकों को संदत्त की जाने वाली रकम।

18. यह निवेदन किया गया कि दोनों विधियों—पुरानी और नई—में पूर्णतः भिन्न-भिन्न दो प्रकार के मूल्य और नीतियां विहित की गई हैं और वे अपने संदर्भ और प्रभाव में इतनी भिन्न थीं जिससे निश्चित रूप से यह आशय निकलता था कि पश्चात्‌वर्ती विधि की नीति और स्कीम उसके विहित किए जाने की विशेषता और सुभिन्नता के आधार पर इतनी स्पष्ट थी जिससे कि लंबित मामलों की बाबत भी पुरानी विधि की व्यावृत्ति से उसका विपरीत आशय था। यह निवेदन किया गया कि अधिकतम सीमा से संबंधित विधि में समेकित और परस्पर संबद्ध उपबंध सम्मिलित और उपबंधित किए गए थे और विधि के दोनों सेटों में महत्वपूर्ण उपबंधों की बाबत सुभिन्नता स्पष्ट की गई थी जिससे किसी भी मामले में पुरानी विधि के लागू रहने से संबंधित तथ्य, इस आधार पर उसके अधीन अंतिम रूप समाप्त कर दिया गया कि यदि उसकी अनुमति दी गई तो उसके परिणामस्वरूप वह अयुक्तियुक्त विधि होगी। इस बात पर जोर दिया गया कि 1973 का अधिनियम सं० 3 इस निमित्त स्पष्ट रूप से यह

उपदर्शित करता है कि पश्चात्‌वर्ती विधि के उपबंध 'तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि' या किसी रूढ़ि, परंपरा अथवा संविदा या न्यायालय की डिग्री या आदेश अथवा अन्य प्राधिकार में किसी असंगत बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे (रेखांकन जोर देने के लिए किया गया है) और पुराना अधिनियम भले ही उसके बारे में अन्यथा यह अभिनिर्धारित किया गया हो कि वह लंबित मामलों की बाबत प्रवृत्त है, नई विधि की धारा 3 द्वारा स्पष्टतः समाप्त कर दी गई।

19. जब उसी विषय पर विधि के पुनः अधिनियमित किए जाने के साथ-साथ परिनियम को निरसित किया जाता है, तब नई अधिनियमिति के उपबंध यह सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए ही नहीं देखे जाएंगे कि साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 द्वारा अपेक्षित परिणाम निकलते हैं या नहीं—धारा 6 का निश्चित रूप से तब तक आश्रय नहीं लिया जाएगा जब तक नये विधान द्वारा इसके विपरीत आशय स्पष्ट नहीं कर दिए जाते—अपितु मात्र यह अवधारित करने के प्रयोजन के लिए कि नये परिनियम के उपबंध भिन्न आशय दर्शित करते हैं या नहीं। वह रीति निर्दिष्ट करते हुए जिसमें पुराने अधिकारों और दायित्वों को आरक्षित रखने में विसंगति उत्पन्न होती है इस न्यायालय द्वारा **पंजाब राज्य बनाम मोहर सिंह**[1] वाले मामले में निम्नलिखित रूप में सुनिश्चित किया गया था —

> "..........ऐसी असंगति नई विधि के समस्त सुसंगत उपबंधों पर विचार करते हुए सुनिश्चित की जाएगी और व्यावृत्तिकारी खंड न होना ही अपने आप में महत्वपूर्ण नहीं है। साधारण खंड के अधिनियम की धारा 6 के उपबंध किसी निरसित मामले में तभी लागू होंगे जब साथ-साथ अधिनियमित की गई नई अधिनियमिति से इसके विपरीत आशय न निकलता हो। अधिनियम की धारा 6 में अधिकथित परिणाम तभी लागू होंगे जब कोई परिनियम या विनियम, जिस नियम का बल प्राप्त हो, वस्तुतः निरसित कर दिया गया हो......।"

20. इस प्रश्न पर विचार करते हुए कि क्या 1973 वाले अधिनियम के विशिष्ट उपबंधों को ध्यान में रखते हुए नई विधि से न्यायोचित रूप से विपरीत आशय प्रकट होता है या नहीं, उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया —

> "इसलिए हमें इस बात की परीक्षा करनी है कि क्या नई विधि में अभिव्यक्त रूप से या अन्यथा यह आशय प्रकट किया गया है कि उन अधिकारों और दायित्वों को समाप्त कर दिया जाएगा या मिटा दिया जाएगा जो पुरानी विधि के अधीन प्रोद्भूत या उपगत हुए हैं..."
>
> पक्षकारों द्वारा ऊपर निर्दिष्ट रीति में उद्धृत की गई समस्त नजीरों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् हमारी यह राय है कि 1973 के नए अधिनियम का पुरानी विधि से प्रोद्भूत या उपगत होने वाले अधिकारों और दायित्वों को समाप्त या नष्ट करने का प्रभाव नहीं था......।"

21. नए अधिनियम की धारा 15 (2) में एक उपधारणा यह है कि पुरानी विधि को समाप्त नहीं किया गया था। इसमें यह उपबंध किया गया है कि यदि राज्य

[1] (1955) 1 एस० सी० आर० 893.

सरकार का समाधान हो जाता है कि पुरानी विधि के अधीन किसी व्यक्ति की बाबत नियत की गई अधिकतम सीमा विधि का अतिक्रमण करते हुए अवधारित की गई थी तो वहां विनिश्चित मामला पुनः चालू किया जा सकता है और उसकी जांच की जा सकती है और 'अधिकतम सीमा तक अतिरिक्त क्षेत्र' पुरानी विधि के उपबंधों के अनुसरण में नए सिरे से अवधारित किए जा सकते हैं। 1973 के अधिनियम की धारा 4 (1) के द्वितीय परंतुक के साथ पठित धारा 40 (1) एक अन्य उदाहरण है जिसमें यह उपबंध किया गया है कि यदि उक्त धारा 4 (1) के अनुसरण में किसी व्यक्ति या कुटुंब को लागू होने वाले अधिकतम सीमा ऐसे व्यक्ति या कुटुंब को पुरानी विधि के अधीन लागू होने वाले अधिकतम क्षेत्र से अधिक है तो ऐसे व्यक्ति या कुटुंब को लागू होने वाला अधिकतम क्षेत्र वही होगा जिसका उपबंध पुरानी विधि के उपबंधों के अधीन किया गया है।

22. उच्च न्यायालय ने अपने ही निष्कर्षों का आश्रय लिया और उसी से सार ग्रहण किया जिसे उसने अधिनियम में 'आंतरिक साक्ष्य' कहा जो उच्च न्यायालय के अनुसार यह उपदर्शित करता है कि लंबित मामले पुरानी विधि से नियंत्रित होते हैं। उच्च न्यायालय ने 1976 के अधिनियम सं० 8 द्वारा अंतःस्थापित धारा 15 के प्रति निर्देश किया जो उसके निष्कर्षों का समर्थन करती हैं। 1976 के अधिनियम सं० 8 द्वारा अतःस्थापित धारा 15 (2) निम्नलिखित रूप में है :—

> "(2) राजस्थान टेनेंसी ऐक्ट 1955 (1955 का राजस्थान अधिनियम 3) के अधीन उपलभ्य किसी अन्य उपचार पर कोई प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना यदि राज्य सरकार का अभिलेख मंगाने के पश्चात् या अन्यथा यह समाधान हो जाता है कि निरसित अधिनियम की धारा 40 के उपबंधों के अधीन उद्भूत होने वाले किसी मामले में पारित कोई अंतिम आदेश ऐसे निरसित उपबंधों का उल्लंघन करते हुए दिया गया है और ऐसा आदेश राज्य सरकार पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है अथवा नए और महत्वपूर्ण मामले अथवा ऐसे साक्ष्य के आधार पर जो अब उसकी जानकारी में आया है, पुनः विचार किए जाने की आवश्यकता है वहां वह इस अधिनियम के आरंभ होने की तारीख से पांच वर्ष के भीतर किसी भी समय अपने किसी भी अधीनस्थ अधिकारी को यह निदेश दे सकती है कि वह ऐसे विनिश्चित मामले को

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है :—

> " (2) Without prejudice to any other remedy that may be available to it under the Rajasthan Tenancy Act, 1955 (Rajasthan Act 3 of 1955), if the State Government, after calling for the record or otherwise, is satisfied that any final order passed in any matter arising under the provisions repealed by Section 40, is in contravention of such repealed provisions and that such order is prejudicial to the State Government or that on accoun tthe discovery of new and important matter of evidence which has since come to its notice, such order is required to be reopened, it may, at any time within five years of the commencement of this Aat, direct any officer

1989(3) eILR(PAT) SC 72

पुनः आरंभ करे और ऐसे निरसित उपबंधों के अनुसरण में नये सिरे से विनिश्चय करे।" (अधोरेखांकन जोर देने के लिए किया गया है)

23. उच्च न्यायालय ने आरंभिक शब्दों के प्रति निर्देश करते हुए निम्नलिखित निष्कर्ष दिया—

> "धारा के आरंभिक शब्दों 'राजस्थान' टेनेंसी ऐक्ट, 1955 (1955 का अधिनियम सं० 3) के अधीन उपलभ्य किसी उपचार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना' से स्पष्टतः दर्शित होता है कि लंबित मामले पुरानी विधि द्वारा नियंत्रित होंगे। यदि विगत और बंद संव्यवहारों को पुनः आरंभ किया जाता है और निरसित विधि के उपबंधों के अधीन नए सिरे से विनिश्चित किया जाता है और राजस्थान टेनेंसी ऐक्ट, 1955 के अध्याय (iii) के अधीन अधिकतम क्षेत्र नियत किया जाता है तो आवश्यक विवक्षा द्वारा इसका यह अर्थ निकाला जाना चाहिए कि लंबित मामलों का विनिश्चय पुरानी विधि के अधीन किया जाना चाहिए।"

24. राजस्थान राज्य के विद्वान् काउंसेल श्री लोढ़ा ने यह निवेदन किया कि 'अधिकतम क्षेत्र' 1955 वाले अधिनियम के अध्याय 3(ख) के अधीन विहित कानूनी मानकों द्वारा अधिसूचित तारीख अथवा 1-4-1966 के प्रति निर्देश से नियत किया जाना चाहिए। दोनों विधान एक दूसरे के संपूरक हैं और इनमें दो-स्तरीय उपबंध बनाए गए हैं जहां तक 1955 के अधिनियम के अध्याय III-ख, जिस रूप में कि वह 1-4-1966 को था, के भीतर आने वाले और उससे प्रवृत्त होने वाले मामलों का संबंध है वे उसी विधि द्वारा नियंत्रित होते रहेंगे क्योंकि उक्त अध्याय III-ख द्वारा सर्जित अधिकार और बाध्यताएं उपगत अधिकार और बाध्यताओं के समतुल्य हैं। श्री लोढ़ा ने यह निवेदन किया कि उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया मत अपवादस्वरूप नहीं था।

25. मामले पर सावधानी से विचार करने पर हम इस विषय पर उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए मत से सहमत हैं। अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा 1973 के अधिनियम की धारा 3 के उपबंधों पर, जो उच्च न्यायालय द्वारा इस विषय पर दिए गए निष्कर्ष की मान्यता के संबंध में है, लिया गया आश्रय हमारी राय में अत्यंत सारहीन है। विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि 1973 के अधिनियम की धारा 3 में आने वाली 'तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के असंगत होते हुए भी' अभिव्यक्ति 1955 के अधिनियम के अध्याय III-ख के प्रवर्तन को अपवर्जित कर देती है जो उनकी दलील के अनुसार यदि सजीव भी रखी जाती तो भी 'तत्समय प्रवृत्त विधि, ही होगी और इसलिए, धारा 3 द्वारा अपवर्जित हो जाएगी। उच्च न्यायालय द्वारा इस दलील को मानने से इनकार कर दिया गया —और हमारी राय में ऐसा ठीक ही किया गया— इस न्यायालय द्वारा **राव शिव बहादुर सिंह और एक अन्य बनाम विंध्य प्रदेश राज्य**[1] और **मुख्य खान निरीक्षक बनाम**

---

sub-ordinate to it to re-open such decided matter and to decide it afresh in accordance with such repealed provisions."

Emphasis Supplied)

---

1 1953 एस० सी० आर० 1186.

के० सी० थॉपर[1] वाले मामलों में प्रख्यापित निर्णयों का आश्रय लेते हुए ऐसा ठीक ही किया गया है। उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि 'तत्समय प्रवृत्त विधि' अभिव्यक्ति के अंतर्गत 'प्रवृत्त समझी गई' विधि नहीं आती और तद्नुसार अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा धारा 3 के जिन आरंभिक शब्दों का आश्रय लिया गया है उनका ऐसा कोई अध्यारोही प्रभाव नहीं होगा जिससे पुरानी विधि अपवर्जित हो जाए।

26. किसी निरसनकारी परिनियम का व्यावृत्तकारी उपबंध इस प्रकार व्यावृत्त किए गए अधिकारों और बाध्यताओं के बारे में पूर्ण नहीं होता और न ही निरसन से बच रहे अधिकारों के बारे में पूर्ण होता है। इस न्यायालय द्वारा **आयकर आयुक्त उत्तर प्रदेश बनाम शाह सादिक**[2] वाले मामले में निम्नलिखित निष्कर्ष दिया गया—

> "......दूसरे शब्दों में, व्यावृत्तकारी उपबंध से जो कोई भी अधिकार अभिव्यक्त रूप से बचा लिए गए हैं वे बचे रहेंगे। किंतु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि जो अधिकार व्यावृत्तकारी उपबंध से नहीं बचाए जा सके वे समाप्त हो गए अथवा मात्र इस तथ्य से वस्तुतः समाप्त कर दिए गए कि पुराने परिनियम को निरसित करने वाली नई विधि अधिनियमित कर दी गई है। जो अधिकार उपगत होते हैं वे तब तक सजीव रहते हैं जब तक कि उन्हें अभिव्यक्त रूप से समाप्त न कर दिया जाए। साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6(ग) के पीछे यही सिद्धांत है......।"

हम उच्च न्यायालय के इस मत से सहमत हैं कि 1973 के अधिनियम की स्कीम में 1955 के अधिनियम के अध्याय III-ख और धारा 5(6-क) के निरसित उपबंधों के व्यावृत्त किए जाने के प्रतिकूल और असंगत आशय प्रकट नहीं होता, जहां तक उनका संबंध लंबित मामलों से है और पुरानी विधि के अधीन उपगत अधिकार और दायित्व अप्रभावित हैं। हमारी राय में, अपीलार्थी की दलील (क) सारहीन है।

27. **दलील (ख) की बाबत**—

इसके बाद हम दूसरे प्रश्न पर आते हैं कि क्या प्रस्तुत मामलों में यद्यपि राजस्थान साधारण खंड अधिनियम, 1955 की धारा 6 के उपबंध लागू होते भी हो, तो भी प्रस्तुत मामले में 'उपगत' अधिकार या प्रोद्भूत दायित्व अंतर्वलित नहीं हैं जिससे कि पुरानी विधि का आश्रय निरसन के पश्चात् भूधारकों के विरुद्ध कार्रवाई आरंभ करने या कार्यवाहियों को चालू रखने के लिए लिया जा सके। यह दलील दी गई कि यदि पुराने अधिनियम के उपबंधों को व्यावृत्त मान भी लिया जाए, तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि राज्य के पक्ष में कोई अधिकार प्रोद्भूत हुआ या अधिकतम क्षेत्र के अवधारण के विषय में भूधारक द्वारा कोई दायित्व उपगत हुआ जिससे कि उनके मामले में पुरानी विधि के उपबंधों का आश्रय लिया जा सके। विद्वान् काउंसेल द्वारा जिस प्रश्न पर अधिक जोर दिया गया वह यह है कि कार्यवाहियों के समाप्त होने के पश्चात् ही अतिरिक्त भूमि राज्य में निहित होगी और जब भूधारक अभ्यर्पित की जाने वाली भूमि की पहचान की बाबत अपनी पसंद को स्पष्ट कर

---

[1] ए० आई० आर० 1961 एस० सी० 833.
[2] ए० आई० आर० 1987 एस० सी० 1221.

देगा । राजस्थान साधारण खंड अधिनियम, 1955 की धारा 6 के खंड (ग) और (ङ) में क्रमश: यह उपबंध किया गया है कि किसी अधिनियमिति का निरसन, जब तक कोई भिन्न आशय प्रकट न किया गया हो 'किसी ऐसे अधिकार, विशेषाधिकार, बाध्यता या दायित्व को प्रवृत्त नहीं करेगा जो इस प्रकार निरसित किसी अधिनियम के अधीन अर्जित, प्रोद्भूत या उपगत हुए हों' अथवा 'ऐसे किसी अधिकार विशेषाधिकार, बाध्यता, दायित्व, जुर्माना, शास्ति, जब्ती या दंड की बाबत किसी अन्वेषण, कानूनी कार्यवाही या उपचार को प्रवृत्त नहीं करेगी ।"

28. इन खंडों के प्रयोजनों के लिए यह आवश्यक है कि अधिकार 'प्रोद्भूत' हो न कि मात्र अपरिपक्व । साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 द्वारा आरक्षित अधिकार क्या है और क्या नहीं है इसके बीच भेद प्रकट करने के बारे में बहुधा यह कहा जाता है कि इनमें अत्यंत सूक्ष्म अंतर है । निरसन द्वारा निरसित परिनियम के अधीन अर्जित अथवा प्रोद्भूत अधिकार ही अप्रभावित है, न कि 'किसी अधिकार के अजित किए जाने का मात्र आशय या अपेक्षा अथवा 'किसी अधिकार के लिए याचना करने की स्वतंत्रता ।'

29. **लालजी राजा** बनाम **फर्म हंसराज**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 के प्रवर्तन के प्रयोजन के लिए 'सैद्धांतिक अधिकारों और 'विनिर्दिष्ट अधिकारों' के बीच अंतर स्पष्ट करते हुए निम्नलिखित उल्लेख किया—

> "यह कि निरसित अधिनियम के अधीन प्रोद्भूत अधिकार को सुरक्षित रखने के लिए किए गए उपबंध का आशय निरसित अधिनियम द्वारा प्रदत्त किए गए सैद्धांतिक अधिकारों के प्रति नहीं था······यह केवल ऐसे विनिर्दिष्ट अधिकारों के प्रति था जो किसी व्यक्ति विशेष को परिनियम में विनिर्दिष्ट किसी एक या अन्य घटना के घटने के संबंध में दिए गए हों······देखिए हैमिलटन **गैल बनाम** ह्वाइट वाले मामले में न्यायमूर्ति एटकिंस के निष्कर्ष [1922 (2) के० बी० 422], अधिकार परिनियम के निरसन की तारीख को विद्यमान मात्र था, निरसित परिनियम के उपबंधों का लाभ प्राप्त करना सामान्य व्यावृतकारी खंड के अर्थान्तर्गत प्रोद्भूत अधिकार नहीं है—देखिए एबट **बनाम** मिनिस्टर फार लैंड्स 1895 ए० सी० 425] और जी० आगडन इंडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटेड **बनाम** ल्यूकस [1969(1) आल इंगलैंड रिपोर्ट्स 121]।"

30. यह सुनिश्चित करने के लिए कि ये प्रोद्भूत अधिकार और उपगत दायित्व हैं या नहीं निरसित विधि की धारा 30(ङ) के प्रति निर्देश करना आवश्यक है । 1955 के अधिनियम की धारा 30(ङ) में निम्नलिखित उपबंध किया गया था—

> 31. *"30-ङ अधिकतम भूमि जो धारित की जा सकती है और भविष्य में अधिग्रहण पर निर्बंधन—

* अंग्रेजी में यह इस प्रकार है :—

> "30-E. Maximum land that can be held and restriction on future acquisitions :—

[1] (1971) 3 एस० सी० आर० 815.

(1) इस अधिनियम या तद्धीन प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के अंतर्विष्ट होते हुए भी कोई भी व्यक्ति राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त अधिसूचित तारीख से—

(क) उसे लागू होने वाले अधिकतम क्षेत्र से अधिक भूमि किसी भी भूधृति के अधीन और किसी भी हैसियत में धारित या कब्जे में बनाए नहीं रखेगा अथवा—

(ख) क्रय, दान, बंधक, समनुद्देश, पट्टा, अभ्यर्पण या अन्यथा अथवा न्यागमन या वसीयत द्वारा कोई भूमि इस प्रकार अर्जित नहीं करेगा जिससे कि उसकी भूधृति में उसे लागू होने वाले अधिकतम क्षेत्र में वृद्धि हो;

परंतु राज्य के भिन्न क्षेत्रों के लिए अलग-अलग तारीखें अधिसूचित की जा सकती हैं।

(2) प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जो ऐसी तारीख को उसे लागू होने वाले अधिकतम क्षेत्र को अधिक भूमि पर कब्जा रखता है अथवा तत्पश्चात् उप-धारा (1) खंड ख के अधीन अधिग्रहण द्वारा किसी भूमि का कब्जा ग्रहण करता है ऐसी तारीख से छः मास के भीतर अथवा ऐसी अधिग्रहण से तीन मास के भीतर जैसी भी स्थिति हो ऐसे कब्जे या अधिग्रहण की सूचना देगा और ऐसी अतिरिक्त भूमि राज्य सरकार को अभ्यर्पित कर देगा और उसे तहसीलदार द्वारा व्ययन के लिए छोड़ देगा जिसका निर्णय अधिकारिता में ऐसी भूमि स्थित है······

---

(1) Notwithstanding anything contained in this act or in any other law for the time being in force, no person shall, as from a date notified by the State Government in this behalf —

(b) acquire, by purchase, gift, mortage, lease, surrender or otherwise or by devolution or bequest, any land so as to effect an increase in the extent of his holding over the ceiling area applicable to him;

Provided that different dates may be so notified for different areas of the state.

(2) Every person, who, on such date, is in possession of land in excess of the ceiling area applicable to him or who there after comes into possession of any land by acquisition under clause (b) of sub-section (1), shall within six months of such date or within three months of acquisition, as the case may be, make a report of such possession or acquisition to, and shall surrender such excess land to the State Government and place it at the disposal of the Tehsildar within the local limits of whose jurisdiction such land is situate.

1989(3) eILR(PAT) SC 72

..........................(अनावश्यक समझकर लोप किया गया)............

यथोक्त

(3) ऐसी सूचना देने या उप-धारा 2 द्वारा यथाअपेक्षित भूमि का अभ्यर्पण करने में जानबूझकर विफल रहने वाला कोई व्यक्ति दोषसिद्धि पर ऐसे जुर्माने को दंडनीय होगा जो एक हजार रुपए तक हो सकता है।

(4) विपरीत प्रभाव डाले बिना और ऐसी दोषसिद्धि और जुर्माने के अतिरिक्त कोई व्यक्ति जो उसे लागू होने वाले अधिकतम क्षेत्र से अधिक भूमि पर कब्जा बनाए हुए हैं, को अतिचारी समझा जाएगा और ऐसी अतिरिक्त भूमि से बेदखल किए जाने का दायी होगा और धारा 183 की उप-धारा (1) के खंड (क) के अनुसार शास्ति के संदाय का दायी होगा :—

परंतु यह कि वह भूमि जहां से ऐसे व्यक्ति को बेदखल किया जाएगा, जहां तक संभव हो, उस पर कोई विलंगम नहीं होगा।

(5) उप-धारा (2) के अधीन अभ्यर्पण द्वारा अथवा उप-धारा (4) के अधीन बेदखली द्वारा राज्य सरकार को प्राप्त होने वाली समस्त भूमि समस्त विल्लंगमों से मुक्त होकर राज्य में विहित होगी......(अनावश्यक समझकर लोप किया गया)"

32. इस उपबंध के अधीन अधिकार और बाध्यताओं को अधिसूचित तारीख या 1-4-1966 के प्रति निर्देश से अवधारित किया जाएगा। महाराष्ट्र एग्रीकल्चरल लैंड्स (सीलिंग आन होडिंग्स) ऐक्ट, 1961 के समतुल्य उपबंधों के प्रति निर्देश करते हुए इस

..............................(Omitted as unnecessary)
....

(3) Any person failing intentionally to make a report or to surrender land as required by sub-section (2) shall, on conviction be punishable with a fine which may extend to one thousand rupees.

(4) Without prejudice and in addition to such conviction and fine the person retaining possession of any land in excess of the ceiling area applicable to him shall be deemed to be a tresspasser liable to ejectment from such excess land and to pay penalty in accordance with clause (a) of sub-section (i) of section 183 :

Provided that the lands, from which a person shall be so ejected shall, as far as may be, be un-encumbered lands.

(5) All lands coming to the State Government by surrender under sub-section (2) or by ejectment under sub-section (4) shall vest in it....................(Omi tted as unnecessary)"

न्यायालय द्वारा **रघुनाथ बनाम महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में निम्नलिखित निष्कर्ष दिया गया है—

> "ऐसा प्रतीत होता है कि अधिनियम की स्कीम के अधीन प्रत्येक व्यक्ति (जिसके अंतर्गत कुटुंब भी है) के लिए नियत दिन के प्रति निर्देश अधिकतम क्षेत्र अवधारित करने की बाबत है। अधिनियम की नीति के बारे में ऐसा प्रतीत होता है कि नियत दिन दो या उसके पश्चात् राज्य में किसी भी व्यक्ति को अधिनियम के अधीन यथा अवधारित अधिकतम क्षेत्र से अधिक भूमि धारित करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा और वह अधिकतम क्षेत्र वही होगा जो नियत दिन को अवधारित किया गया है।"

33. पुन: **भिकोबा शंकर धूमल (मृतक) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से और अन्य** बनाम **मोहन लाल पूनचंद ताथेड और अन्य**[2] वाले मामले में निम्नलिखित निष्कर्ष दिया गया है—

> "अधिनियम के पूर्वोक्त उपबंधों को ध्यान से पढ़ने पर यह दर्शित होता है कि किसी भूधारी द्वारा अतिरिक्त भूमि का अवधारण नियत दिन से किया जाना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति ने अगस्त, 1959 के चौथे दिन के पश्चात् किसी भी समय किंतु नियत दिन से पूर्व अधिकतम क्षेत्र से अधिक कोई भूमि (जिसके अंतर्गत छूट प्राप्त भूमि भी है) धारित करता है वहां ऐसे व्यक्ति को नियत दिन से विहित अवधि के भीतर कलक्टर बोर्ड को ऐसी विवरणी प्रस्तुत करनी चाहिए जिसकी अधिकारिता को उसकी जोत के अधीन भूमि स्थित है यह विवरणी विहित प्ररूप में होगी जिसमें उसके द्वारा धारित भूमि की समस्त विशिष्टियां दी जाएंगी। यदि कोई व्यक्ति नियत दिन को या तत्पश्चात् अधिकतम क्षेत्र से अधिक कोई भूमि, जिसके अंतर्गत छूट प्राप्त भूमि भी है, अर्जित करता है, धारण करता है या कब्जा प्राप्त करता है, तो ऐसा व्यक्ति अधिकतम क्षेत्र से अधिक ऐसी किसी भूमि की तारीख से विहित तारीख के भीतर पूर्वोक्त रीति में विवरणी प्रस्तुत करेगा···।"

34. अपीलार्थियों की ओर से दी गई दलील के समान ही यह दलील दी गई कि अतिरिक्त भूमि से संबंधित स्वत्व ऐसी भूमि को सरकार द्वारा दिए जाने के पश्चात् और उस मामले में अतिरिक्त भूमि की बाबत घोषणा किए जाने के पश्चात् सरकार में निहित हो जाएगा। किंतु यह निष्कर्ष दिया गया कि अतिरिक्त भूमि को अभ्यर्पित करने का दायित्व नियत दिन से पश्चातवर्ती तारीख से होगा। इस न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष दिया—

> "······कोई अन्य अर्थ लगाने से अधिनियम को कार्यान्वित नहीं किया जा सकेगा और किसी धारक द्वारा अतिरिक्त भूमि की सीमा अवधारण असीमित और अनिश्चित हो जाएगा······।"

---

[1] (1972) 1 एस० सी० आर० 48.

[2] (1982) 3 एस० सी० आर० 218.

1989(3) eILR(PAT) SC 72

महाराष्ट्र राज्य बनाम **अन्नापूर्ण बाई और अन्य**[1] वाले मामले में इस तथ्य को दोहराया गया। इस न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष दिया—

> "·········अधिनियम की धारा 21 में निहित रूप से यह उल्लेख किया गया है कि अतिरिक्त भूमि धारण करने वाले व्यक्ति का स्वत्व ऐसी भूमि का कब्जा लेने और अतिरिक्त भूमि की बाबत घोषणा के राजपत्र में प्रकाशित होने के पश्चात् राज्य सरकार में विहित हो जाएगा, किंतु अतिरिक्त भूमि अभ्यर्पित करने का दायित्व ऐसे व्यक्तियों के मामलों में नियत तारीख से होगा जिन्होंने कि नियत दिन से अधिकतम सीमा से अधिक भूमि धारण की है। इसलिए, यदि धारक अपनी भूमि के किसी भाग को अतिरिक्त घोषित किए जाने से पूर्व मर जाता है तो भी अतिरिक्त भूमि नियत दिन से उसकी जोत के प्रति निर्देश के अवधारित किए जाने की दायी होगी······।"

35. इसलिए, यह पता चलता है कि राज्य सरकार में निहित अतिरिक्त भूमि को राज्य सरकार द्वारा नियत दिन को दिए जाने का अधिकार है और केवल संख्यांकन किया जाना शेष रह जाता है। जैसा कि **डाइरेक्टर आफ पब्लिक वर्क्स** बनाम **हो० पो० सांग**[2] वाले मामले में न्यायमूर्ति मॉरिस ने निष्कर्ष दिया—

> "इसलिए, यह हो सकता है कि किसी निरसित नियमिति के अधीन कोई अधिकार दे दिया गया है, किंतु कतिपय अन्वेषण अथवा कानूनी कार्यवाही की जाना आवश्यक है। तत्पश्चात् अधिकार प्रभावित और परिरक्षित हो जाता है। यदि मात्रा की गणना की प्रक्रिया भी आवश्यक है तो भी यह परिरक्षित होगा। किंतु किसी अधिकार की बावत अन्वेषण और ऐसे अन्वेषण के बीच जिसमें यह निश्चित किया जाना हो कि कोई अधिकार दिया जाना चाहिए या नहीं 'अंतर स्पष्ट है। निरसन हो जाने पर निर्वचन अधिनियम द्वारा पूर्ववर्ती को परिरक्षित किया जाता है। पश्चात्वर्ती को नहीं।"

36. पूर्वोक्त अनुच्छेद **एम० एस० शिवानंद** बनाम **के० एस० आर० टी० कारपोरेशन**[3] वाले मामले के अनुमोदन से उद्धृत किया गया था।

37. हम उच्च न्यायालय से इस बात पर सहमत हैं कि अतिरिक्त भूमि की बाबत राज्य का अधिकार अधिनियम के अधीन कोई अपूर्ण अधिकार नहीं है बल्कि राजस्थान साधारण खंड अधिनियम, 1955 की धारा 6(ग) के अर्थान्तर्गत उद्भूत अधिकार है और 1-4-1966 को अतिरिक्त भूमि अभ्यर्पित करने का भू-स्वामी का दायित्व ऐसा दायित्व था जो उक्त उपबंध के अर्थान्तर्गत उपगत था। दलील (ख) में भी कोई सार नहीं है।

38. तद्नुसार ये अपीलें, विशेष इजाजत याचिका और रिट याचिका असफल

---

[1] 1985 अनु: एस० सी० सी० 273.

[2] (1961) 2 ऑलइंग्लैंड रिपोर्ट्स 721.

[3] ए० आई० आर० 1980 एस० सी० 77.

1989(3) eILR(PAT) SC 72

होते हैं और खारिज किए जाते हैं। मामले की परिस्थितियों में खर्चों की बाबत कोई आदेश नहीं दिया जाता।

अपीलें, विशेष इजाजत याचिकाएं और रिट याचिकाएं खारिज की गईं।

ह०/ज०